REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 9 | JUNE - 2019

पारसी रंगमंच में दृश्य विन्यास की भूमिका का अध्ययन

देशराज मीणा
शोध छात्र , नाट्य विभाग , राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर.

प्रस्तावना :

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध से लेकर बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध के लगभग तीन दशकें के बीच सारे हिन्दुस्तान को अपने चटक रंगो में रंग देने वाले हिन्दी–उर्दू के सर्वाधिक लोकप्रिय सफल और एक मात्र व्यावसायिक रंगमंच का नाम था पारसी रंगमंच । भारती रंग–यात्र में पारसी रंगमंच विरोधी दिशा में बहने वाली नदियों का ऐसा अपूर्व संगम है,जहाँ पूर्व –पश्चिम, शास्त्रीय और लोक व्यावसायिक और पुनरुत्थानवादी तथा राष्ट्रीय और रोमनी चेतनायें परस्पर घुलमिलकर एक अजब रुप और अंदाज में हमारे सामने आयी थी।

पारसी रंगकर्म काल के समय में सम्पूर्ण भारत में मुग़ल सभ्यता अपना दम तोड़ रही थी और ब्रिटिस साम्राज्यवाद तेजी से भारत में अपने पैर जमा रहा था इस काल का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रभाव यह बना कि हिन्दु मुग़ल संस्कृति का समन्वय पल्लवित होने लगा। बम्बई में स्थित यूरोपीय ड्रामेटिक कम्पनियों के प्रदर्शन और यूरोपियन क्लबों के रंग–प्रयोग से प्रेरण लेकर पारसी लोगों की रंगमंचीय परम्परा का उदय हुआ । प्रारम्भ में मण्डलियाँ शैंकिया क्लबों के रूप में ही थी किन्तु बाद में अत्यंत लोकप्रिय होने के कारण कम्पनियाँ पारसी रंग–परम्परा के उद्भव का प्रेरणा स्त्रो बन गयीं ।

भारतीय रंगमंच के इतिहास में पारसी रंगमंच काल अपने चित्रित पर्दो के लिये ही जाना जाता था पारसी रंगमंच में दृश्य विन्यास के नाम पर यह पर्दो ही काम में लिये जाते थे। पारसी नाटकों में मुख्य पर्दा तो नाट्य प्रस्तुति की संपूर्ण कथा का प्रदर्शित करता ही था। प्रत्येक दृश्य के लिये पृथक पर्दा चित्रित किया जाता था जिसमें त्रिआयामी प्रभाव के साथ फर्नीचर, स्थापत्य आदि का विस्तार से चित्रण किया जाता था चित्रण की प्रक्रिया में यहां तक ध्यान रखा जाता था कि कहीं छोटी से छोटी वस्तु चित्रित होने से रह न जाये। विशालकाय पर्दो के साथ विंग्स को भी चित्रित किया जाता था। इन पर्दों के चित्रण में रंगों एवं आकृतियों का प्रयोग ही इन्हें नाटकीय स्वरूप प्रदान कर देता था। पारसी रंगमंच में यह पर्दो आये कहा से थे। पारसी लोग पड़े लिखे होते थे और अंग्रेजी का भी अच्छा ज्ञान था अंग्रेजी नाटक देखने में भी अच्छी रूचि थी। पारसी लोग इंग्लैण्ड जाकर रहे दो बरस, तीन बरस रहते थे और बारह महीने वहाँ के सब नाटक देखा करते थे।

पारसी रंगमंच का जब जन्म हो रहा था तो उस समय विक्टोरिया थियेटर का बोलबाला था इस बात को हम ऐसे भी कह सकते है कि पारसी थियेटर का जन्म महारानी विक्टोरिया के जमाने में हुआ और उस वक्त विक्टोरिया थियेटर का अच्छा प्रभाव था और उस समय सबसे म"हूर थियेटर (Drury Lane) डूरी लेन थियेटर और कोनेट गार्डन (Covent Garden) थियेटर थे। जो थियेटर कलकत्ता, बम्बई और फिर धीरे–धीरे बाकी शहरों में बने ये सभी थियेटर

इन्हीं के नक्शों के अनुसार ही बने। उस वक्त प्रोसीनीयम, विंग्स, पर्दे और सामने का पर्दा जिसे ड्राप कहा जाता था तो थियेटर के महत्वपूर्ण हिस्से बन चुके थे और यही कारण है कि पारसी थियेटर में ऐक्ट या अंक को ड्राप कहा जाता था। पारसी थियेटर पर सीधा–सीधा असर विक्टोरियन थियेटर का था विक्टोरियन थियेटर प्रोसीनीयम थियेटर था प्रोसीनीयम थियेटर आ जाने से थियेटर दो हिस्सों में बंट गया था प्रोसीनीयम ने स्टेज को दर्शकों से अलग करते हुए अपने आप को जैसे बन्द कर लिया। इसकों ऐसे भी कह सकते है कि जैसे किसी तस्वीर हम फ्रेम कर लेते हैं। स्टेज के दोनों तरफ विंग्स होती थी जिससे कलाकार स्टेज पर प्रवेश करते और बाहर भी जाते थे। मंच के बीच में बड़े–बड़े पर्दे होते थे जिन बाग, जंगल स्वर्ग, सड़क के सीन चित्रित होते थे। यह पर्दे ईटालियन रेनेसा की देन है। सेबासटीयानों सरलीयों ने 1545 ई. में यह बताया कि Perspective Design को लेकर स्टेज कैसे बनाया जाये। इन Perspective Design के पर्दों को देखने से यह मालूम होता था कि आप एक शहर की ईमारतों के बीच में खड़े है और उन ईमारतों के बीच में एक सड़क गुजर रही है जो दूर तक चली जाती है। मगर इन पर्दो को इंग्लैण्ड में पहुँचने में कई साल लगे और वहाँ से भारत में।

पारसी थियेटर ने इन पर्दो को दृश्य विन्यास के रूप में काम में लिया हर सीन के साथ पर्दा नीचे गिराया जाता था और जैसे ही एक सीन खत्म होता पर्दे को ऊपर उठा लिया जाता था। पर्दे इतने खूबसूरत होते थे कि नाटक देखने आये दर्शक उसकी ताली बजा कर उसकी तारीफ करते थे। पारसी रंगमंच में दृश्य–विन्यासकर्ता एक पेन्टर ही होता था जब यह पेन्टर किसी दृश्य के लिए पर्दो बनता था तो उस पर्दे की सबसे पहले लगोन पर पूजा की जाती थी यह एक तरह की रस्म की जाती थी। एक दृश्य से दूसरे दृश्य के पर्दे को लगाने में थोड़ा समय लगता था इसलिए पारसी थियेटर में कोमिक ड्रामा लिखा जाने लगा ताकि जब तक की दूसरे दृश्य का पर्दा नहीं लग जाता था दर्शकों के मनोरंजन के लिए कोमिक ड्रामा खेला जाता था।

पारसी के कुछ नाटककारों ने इन कोमिक ड्रामा के जरिये समाज की बुराईयों पर व्यंग भी लिखे। जो इन कोमिक ड्रामा को करते थे वे कलाकार बड़े मजे कलाकार होते थे लिखे हुये संवादों के अलावा उनमें दर्शकों के महौल को देखते हुए उनमें फेर–बदल भी कर देते थे। उनको मालूम होता था कि सेट बदलने में कितना समय लगेगा। और जब तक सेट बदलता तब तक दर्शकों का मनोरंजन करते थे। स्टेज मैनेजर विंग्स में खड़ा होता और जब सीट बजा कर इशारा देता कि स्टेज तैयार हो गया है तो एक्टर अपना सीन बन्द करके स्टेज से बाहर चले जाते थे। नाटक के कलाकार अपने–अपने प्रवेश के अनुसार विंग्स में खड़े हो जाते थे। आरकेस्ट्रा को इशारे होता कि नाटक शुरू होने वाला है और ड्राप सीन को उठाने वाला ड्राप सीन उठाता था ऐसे पारसी थियेटर में एक दृश्य को बदलने के लिए कोमिक ड्रामा का इस्तेमाल किया जाता था पारसी थियेटर में दृश्य बदलने के बाद दूसरा दृश्य तैयार है इसके लिए सीटी का जो इस्तेमाल है वो भी विक्टोरियन थियेटर में भी होता था।

पारसी थियेटर में हैरतअंग्रेज स्टेज इफेक्ट। यह भी थियेटर को रेनासा की ही देन थी और इसका सेहरा भी सेबासटीयनों के सर बंधता है। उसनें सबसे पहले स्टेज पर मशीनरी के जरिये बहती हुई नदी, आसमान को हिस्सों में बांटना और बादलों का दिखाना जो छोटे से बड़े होते चले जाते थे यह भी विलायत से होते हुए पारसी थियेटर में पहुंचा पारसी थियेटर में इनके मध्यम से कई हैरतअंग्रेज सीन दिखाये जाते थे। जैसे जमीन का एकदम से फट जाना और उसमें सीता का समा जाना। आसमान में बादलों के बीच से भगवान इन्द्र का रथ निकलते हुये दिखाना। हनुमान अपनी हथेली में पहाड़ को उड़ाने का दृश्य। भगवान नृसिंह का प्रगट होना और हिरणकश्यप को मारना। इस तरह से स्टेज इफेक्ट दर्शकों में बहुत लोकप्रिय हुये।

पारसी थियेटर के यह दृश्य जिन्होंने देखे होंगे वो उनको आज भी याद होंगे। इसलिये पारसी थियेटर लोकप्रिय हुआ था पारसी थियेटर में दृश्य–विन्यास के लिए तीन महत्वपूर्ण चीजें नई जुड़ी। एक तो पर्दो का इस्तेमाल दूसरा हैरत अंग्रेज स्टेज इफेक्ट और तीसरी चीज बीच–बीच में कोमिक ड्रामा जो कि दृश्य को बदलने में सहायक होता था।

पारसी थियेटर में शुरूआत में सभी पर्दे बहार के पेन्टर के द्वारा तैयार किये गये थे। विक्टोरिया कंपनी का दूसरा नाटक ''बैजनमनी जेत'' जब किया जा रहा था तो नये ड्रॉपसीन तैयार करने थे ''इटैलियन कलाकार सिरोनी ने नाटक के ड्रॉपसीन तैयार किये। रिसर्च के बाद पर्दे व ड्रेसेसे ईरानी तूरानी किस्म के बने। कानराजी

द्वारा लिखित यह नाटक 20 मार्च 1869 को जब खेला गया तो सबने पाया कि उन थिएटर छोटी–छोटी कंपनियों के छिटपुट काम जैसा न रहकर अंग्रेजों की कंपनियों जैसा ''लैविश–टाइप' बन चुका था।"

धीरे–धीरे पर्दो को पेन्ट करने का काम हमारे यहाँ भी होने लगा था जैसे–
''शाहजादों सियाहबख्श की सीनरी तैयार की थी मिस्त्री दादाभाई दलाल ने।''

पारसी थियेटर में पर्दो के माध्यम से लोगों को कई दृश्य दिखाकर प्रभावित करते थे। पारसी थियेटर में दृश्य–विन्यास पर्दो से ही किया जाता था। एक नाटक में जितने भी सीन होते थे उनके लिए अलग–अलग पर्दे को काम में लिया जाता था। एक नाटक में 50–60 पर्दो का इस्तेमाल होता था कभी–कभी इससे भी अधिक पर्दो का इस्तेमाल हो सकता था यह इस बात पर निर्भर करता है कि नाटक में सीन कितने है। एक कम्पनी जब नया नाटक तैयार करती भी तो उसमें 3–6 महीने का समय लगता था।

जब एक नाटककार ने नाटक को लिख दिया और कम्पनी उसको करने के लिए तैयार है तो नाटककार जब नाटक को सुनाता था तो उस समय नाटक कम्पनी का मालिक, पेन्टर, और स्टेज मैनिजर होते थे। पेन्टर पूरा नाटक सुनने के बाद पर्दे पेन्ट करता था। स्टेज मैनिजर और जो कि मंच के लिए आवश्यक वस्तु को जुटाने का काम करता था और स्टेज मैनिजर को पूरा नाटक भी याद होना चाहिए। दृश्य को बदले के समय कौन सा पर्दा नीचे आना है और कब ऊपर जाना है यह सब स्टेज मैनिजर को पता होता था। पर्दा रस्सी से लिये और ऊपर लाया जाता था।

पर्दो के सामने खड़े होकर जब एक कलाकार संवाद बोलता था तो ऐसा लगता था कि कलाकार उस ही जगह पर है जो जगह पर्दो पर बनी होती थी। यह दर्शकों को वास्तविकता का आभास करते थे। इसको ऐसे भी कहा जा सकता है कि नाटकीयता उत्पन्न करते थे। दृश्य सज्जा में यथार्थ की प्रस्तुति अथवा चरित्रों की व्याख्या आदि तत्वों पर अधिक बल नहीं दिया जाता था दृश्य सज्जा में मूलतः चित्रित पर्दो का उपयोग होता था अतः दृश्य निर्माण पद्धति की अपेक्षा अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम रंगों का विविध प्रयोग से होता था। पारसी थियेटर में पर्दो का अत्यधिक प्रयोग लिया जाता था यह पर्दे त्रिआयामी प्रभाव एवं प्रतिच्छायाओं के साथ शानदार तरीके से चित्रित किये जाते थे।

पारसी थियेटर को हम यदि याद करते है तो उसमें होने वाले पर्दो का प्रयोग पारसी थियेटर में दृश्य–विन्यास की इस परम्परा के कारण ही नये शैली के रूप में विकसित हो गयी पारसी शैली, पारसी थियेटर के इस दृश्य–विन्यास ने दर्शकों को बहुत अधिक प्रभावित किया।

पहली पारसी मण्डली 1853 में स्थापित की थी।इसके बाद 1853 से लेकर 1869 तक अनेक नाटक कम्पनियाँ अस्तित्व में आयीं । इसके बाद 1870 में "पेस्टनजी पराम" बम्बई में ओंरिजनल थियेट्रिकल कम्पनी की स्थपना हिन्दी उर्दू नाट्याभिनय के लिए की गई जिसके अभिनेता खुर्षेदजी बल्लीवाला कावस की खटाऊ सोहराब जी और जहाँगीर आदि थें। इन कम्पनियों का मालिक एक होता था और बाकी तमाम नाटकार, कलाकार, दृश्य विन्यासकर्ता उसके नोकर। कम्पनी को चलाने का पूरा जिम्मा मालिक का होता था इसलिये यह बिल्कुल जरूरी था नाटकों का चुनाव ऐसा हो जो कि सभी का मनोरंजन कर सके और नाटकों में वे तमाम बाते हो जो मनोरंजन करने में सहायक हो इसलिये पारसी रंग परम्परा में दृश्य विन्यासकर्ता का स्थान महत्वपूर्ण था। पारसी रंगमंच में तीन चीजें नई जुडी । एक तो पर्दे का इस्तेमाल, दूसरा हैरत अंगेज स्टेज और स्पेशल इफेक्ट। यह सब विक्टोरियन थियेटर से आया था हम कह सकते है कि पारसी थियेटर पर सीधा असर विक्टोरिया थियेटर का हुआ। विक्टोरियन थियेटर प्रोसीनीयम थियेटर था। थियेटर दो हिस्सों बट गया था स्टेज और दर्शक वाला हिस्सा अलग–अलग हो गया था। स्टेज अब किसी तस्वीर के फ्रेम जैसा दिखने लगा स्टेज के दोनो तरफ विग्स जिससे कलाकार स्टेज पर दाखिल भी होते थे। मंच के बीच में बडे–बडे पर्दे होते थे जिन पर महल, बाग, जंगल, स्वर्ग के सीन पेन्ट किये जाते थे।यह पर्दे ईटालियन रेनेसां की देन है।

सेबासतीयानों सरलीयों ने 1545 ई. में यह बताया कि परिप्रेक्ष्य विन्यास को लेकर स्टेज बनाया जायें। इन परिप्रेक्ष्य विन्यास के पर्दे को देखने से यह मालूम होता था कि आप वाकई में एक शहर की इमारतों के बीच में खडे है और इमारतों के बीच में एक सडक गुजर रही है, जो दूर तक चली जाती है मगर इन पर्दो को इंग्लैड में पहुँचने में कई साल लगे और वहाँ से हिन्दुस्तान में आया।

पारसी रंगमंच में दृश्य–विन्यास को देखकर चकित हो जाते थे । जैसे जमीन का एकदम से फट जाना और सीता का उसमें समा जाना, आसमान में बादलों के बीच से भगवान इन्द्र का रथ गुजरते हुये दिखाना, पहाड़ को अपनी हथेली पर लिये हुये हनुमान का उड़ना, अचानक खम्भे का दो हिस्सों में टूटना और आकाश से परियों को उतारने में जटिल यंत्र प्रयोग में लाये जाते थे।

''पारसी थियेटर में मंच पर पर्दो का इस्तेमाल, ऊपर उठते हुए पर्दे, प्रोसिनियम अथवा चौखटे नुमा मंच, हैरतअंगेज़ स्टेज इफेक्ट, घूमता हुआ मंच, मंच के आगे संगीतकारों या गायक मण्डलियों के बैठने की व्यवस्था, मंच के दोनों तरफ विंग्स जिनसे कलाकार आते जाते थे।''

पारसी रंगमंच की तडक भडक व भारी भरकम सीन सीनरी के कारण वो अपनी अलग पहचान स्थपित करने लगे।

''हर सीन के प्रारम्भ होने के साथ ही पर्दा नीचे गिराया जाता था और जैसे ही सीन ख़त्म होता पर्दा ऊपर उठाया जाता था। इन पर्दों में सामने का पर्दा अधिक आकर्षक होता था परन्तु इसका नाटक से कोई भी सम्बन्ध नहीं होता था।''

और जैसे ही सीन खत्म होता पर्दा ऊपर उठा लिया जाता था पर्दे इतने खुबसूरत होते थे कि दर्शक ताली बजा कर उसकी तारीफ करते थे। इसलिए पारसी रंगमंच में शिल्प (दृश्य विन्यास) की महत्वपूर्ण भूमिका होती थी । पर्दे एक शिल्पकार के द्वारा बनाये जाते थे इसलिये शिल्पकार को बहुत सारी बातो का ध्यान रखना पडता था

लगभग सौ वर्षो तक इन पर्दो का खुलकर प्रयोग हुआ इस नाट्य परम्परा के दृश्य विन्यास उस समय के विक्टोरियन युग के रोमान्टिक नाटकों में प्रयोग आ हरे थे । पारसी रंगमंच में इन पर्दो का प्रयोग यथार्थ का भ्रम उत्पन्न करने के स्थान पर यथार्थ को अधिक से अधिक नाटकीय के उद्देश्य से किया गया था। दृश्य विन्यासकर्ता नाटक में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है क्योकि दृश्यो को इस तरह बनाता है की लोगो को रोचक लगे और नाटक में नाटकयीता बनी रहें। किसी भी नाटक की जब कल्पना की जाती है तो दृश्य विन्यासकर्ता को जरूर याद किया जाता है । नाटकार व दृश्य विन्यासकर्ता मिलकर एक नऐ नाटक का निर्माण करते हैं रंगमंच में दृिश्य विन्यास की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसलिए पारसी रंगमंच में दृश्य विन्यास को आज भी याद किया जाता हैं।

अलवर में आज भी महाराजा भर्तृहरि नाटक में पारसी रंगमंच की एक झलक दिखाई देती है।

संदर्भ ग्रन्थों की सूची

1.सिंह रणवीर "पारसी थियेटर" राजस्थान संगीत अकादमी ,जोधपुर, संस्करण–1990
2.गुप्त सोमनाथ "पारसी थियेटर उदभव और विकास" लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण–2015
3.कथावाचक राधेश्याम प• "मेरा नाटककाल" प्रकाशन, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली,2012
4 खंडेलवाल आलोक "अलवर की रंगमंचीय यात्रा" राजस्थान पत्रिका अलवर संस्करण–2003
5 रंग प्रसंग (अंक–13) नाटककाल" प्रकाशन, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली,2004
6 लाल डॉ. लक्ष्मीनारायण पारसी–हिन्दी रंगमंच,राजपाल एण्ड सन्स,कश्मीरी गेट,दिल्ली
7 आनंद महेश,रंग दस्तावेज़ सौ साल,(खंड–एक,दो) प्रकाशन, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय,प्रथम संस्करण–2007